भाषा । साहित्य । संस्कृति

प्रश्नचिह्न

एक आग है भीतर
जो और-और जलाती नहीं,
निरंतर-निरंतर जगाती है मुझे
मैं जागता हूँ और जानता हूँ

जगतभर का सोना क्यों हुआ महँगा
और कैसे हुआ,कैसे हुआ सस्ता अंधेरा
जबकि उतना भी कठिन नहीं है उजास
और सभी-सभी के लिए सही सलामत
नहीं सिर्फ़ मेरे लिए...

~ राजकुमार कुम्भज

वर्ष:02, अंक:20,नवंबर 2025

9 789355 257833

आवरण- बंशीलाल परमार

संपादक : आलोक रंजन

भाषा । साहित्य । संस्कृति

प्रश्नचिह्न

नवंबर 2025 । बीसवाँ अंक

प्रबंध सम्पादकः
राहुल राज

प्रबंध सहयोगः
सौरव कुमार भारती

सम्पादक
आलोक रंजन

आवरणः बंशीलाल परमार
रेखांकनः श्वेता कुमारी

अक्षर संयोजन
खुशी

प्रश्नचिह्न में प्रकाशित रचनाओं का सर्वाधिकार रचनाकारों के अधीन सुरक्षित है। प्रश्नचिह्न में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार, तथ्य लेखकों के अपने हैं। प्रश्नचिह्न में प्रकाशित रचनाओं के लिए प्रश्नचिह्न पत्रिका समूह का सहमत होना आवश्यक नहीं है और न ही पत्रिका इसके लिए उत्तरदायी है।

वार्षिक मूल्य :

व्यक्तियों के लिए-	600.00 रुपये
संस्थाओं और पुस्तकालयों के लिए-	1500.00 रुपये
विदेशों में-	$25

एक प्रति का मूल्य :

व्यक्तियों के लिए-	50.00 रुपये
संस्थाओं के लिए-	100.00 रुपये
विदेशों में-	$10

विज्ञापन दरें :

बाहरी कवर-	20,000.00 रुपये
अन्दर कवर-	15,000.00 रुपये
अन्दर पूरा पृष्ठ-	10,000.00 रुपये
अन्दर का आधा पृष्ठ-	7,000.00 रुपये

संपादकीय कार्यालयः

8/54 - ए, प्रथम तल, डबल स्टोरी,
विजय नगर, दिल्ली - 110009
मोबाइल : 9155113056

ई-मेल: prashanchinha.patrika@gmail.com
infoprashanchinha.patrika@gmail.com

वेबसाईट: https://prashanchinhapatrika.blogspot.com

फेसबुक: https://www.facebook.com/prasnacihnapatrika

इंस्टाग्राम: https://www.instagram.com/prashanchinha.patrika

अनुक्रम

सम्पादकीय

कविताएँ

राजकुमार कुम्भज, मुख़्तार अहमद, नंदलाल मणि त्रिपाठी
श्वेता त्रिपाठी, प्रभात कुमार गौतम

कहानियाँ

प्रवीण 'बनजारा'
गोविन्द उपाध्याय

आलेख

सुजाता मिश्रा
डॉ. आरती 'लोकेश'

समीक्षा

मधुबाला शुक्ला

विविध

साहित्यिक समाचार

शिक्षा पर लगातार बढ़ता टैक्स

संपादकीय

हमारे प्रिय बंशीलाल परमार द्वारा भेजी गई यह चित्र सड़क किनारे बैठी गहरी सोच में डूबी, सूरज की रोशनी और धूल भरी हवा के बीच हमारे समय की सबसे बड़ी विडंबना को उजागर करती है। यह तस्वीर सिर्फ एक व्यक्ति का प्रतीक नहीं, बल्कि उस पूरे भारतीय समाज का प्रतिबिंब है जो प्रगति की राह पर तो है, लेकिन अब भी कई बुनियादी मोड़ों पर अटका हुआ खड़ा है। किसी भी देश की रीढ़ उसकी शिक्षा होती है। हम अक्सर सुनते हैं। देश तभी आगे बढ़ेगा जब उसका नागरिक पढ़ा-लिखा होगा। यह बात अक्षरशः सही भी है। किन्तु प्रश्न यह उठता है कि जिस शिक्षा को हम प्रगति की पहली शर्त मानते हैं, वह आज इतनी महंगी क्यों हो गई है? यह सवाल केवल आर्थिक नहीं बल्कि यह नैतिक, सामाजिक और मानवीय प्रश्न भी है। शिक्षा की लागत केवल फीस, किताबों और परिवहन तक सीमित नहीं है। आज स्थिति यह है कि सरकार स्वयं शिक्षा पर भारी-भरकम टैक्स लगाकर पढ़ाई को एक महँगी सौगात बना रही है। कोचिंग संस्थानों और निजी शैक्षणिक सेवाओं पर 18% जीएसटी लगाकर सरकार ने शिक्षा को व्यापार की श्रेणी में धकेल दिया है। प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी करने वाले छात्र जो देश का भविष्य हैं। वे सबसे ज़्यादा प्रभावित होते हैं। हर क्लास, हर कोर्स, हर टेस्ट-सीरीज़ पर टैक्स का यह बोझ उन्हें उस राह से और दूर ले जाता है जिसे पाने के लिए वे संघर्ष कर रहे होते हैं।

मैं स्वयं जब पहली बार सीबीएसई की परीक्षा शुल्क के बारे में जान पाया, तब मैं ग्रेजुएशन के दूसरे वर्ष में था। इसलिए नहीं कि उस समय शुल्क कम था, बल्कि इसलिए कि नवोदय विद्यालय ने हर बार हमारी ओर से वह भुगतान किया। उस उम्र में यह समझ भी नहीं थी कि बाहर की दुनिया में शिक्षा क्या-क्या कीमत वसूलती है। लेकिन जैसे ही स्कूल की छत से बाहर निकले, दुनिया ने बताया कि शिक्षा अब सेवा नहीं, उद्योग बन चुकी है। एक ओर सरकार कहती है कि “एजुकेशन फॉर ऑल” सबका शिक्षा का अधिकार, लेकिन हकीकत यह है कि फीस, कोचिंग, किताबें, यूनिफॉर्म, प्रवेश परीक्षा शुल्क और परिवहन सब मिलकर शिक्षा को आम आदमी की पहुंच से दूर ले जा रहे हैं। गरीब तो छोड़िए, मध्यमवर्गीय परिवार तक इस बोझ से दबने लगे हैं।

जब हम इस कवर फोटो को देखते हैं। सड़क किनारे बैठा यह व्यक्ति जैसे हमें पूछ रहा हो। मेरे बच्चे का भविष्य क्या होगा? क्या शिक्षा मेरे बस की बात भी है? यह प्रश्न आज लाखों माता-पिता की आवाज है। शिक्षा का महँगा होना केवल एक आर्थिक समस्या नहीं यह सामाजिक असमानता को जन्म देता है। जब शिक्षा की सीढ़ी केवल उन्हीं के लिए उपलब्ध हो जो पैसा चुका सकें, तब समाज दो हिस्सों में बंट जाता है। एक वह जो अवसरों की रोशनी में आगे बढ़ता है, दूसरा वह जो अंधेरे में ही जीने को मजबूर हो जाता है। सवाल यह नहीं कि शिक्षा क्यों महँगी है। सवाल यह है कि शिक्षा कब सुलभ होगी? कब वह बच्चे की जन्मस्थली से नहीं, उसके सपनों और क्षमता से तय होगी? सरकारें योजनाएँ लाती हैं, घोषणाएँ करती हैं, परंतु जमीनी हकीकत यह है कि शिक्षा को अभी भी “आसान” नहीं बनाया गया बस “उपलब्ध” बता दिया गया है। उपलब्धता और पहुँच इन दोनों में जमीन-आसमान का फर्क है। हमारा कर्तव्य केवल आलोचना करना नहीं, बल्कि यह याद रखना भी है कि किसी भी देश की प्रगति उसकी सड़कों पर बैठी यह थकी हुई आकृति देखकर तय नहीं होती उसके बच्चों की स्कूलों तक पहुँच देखकर तय होती है।

शिक्षा को अधिकार नहीं, अवसर नहीं आधार बनाना होगा। जब तक गरीब का बच्चा भी उसी आत्मविश्वास से पढ़ने जा सके, जैसे विशेष स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चे जाते हैं। तब तक हमारा विकास अधूरा ही रहेगा।

और शायद यह तस्वीर हमें यही याद दिलाती है
कि सड़क कितनी भी चौड़ी हो जाए,
अगर शिक्षा की राह संकरी रहेगी
तो देश कभी पूरा आगे नहीं बढ़ पाएगा।

आपका-

आलोक रंजन

alokranjanoffice@gmail.com

नहीं सिर्फ़ मेरे लिए

कविता

एक आग है भीतर
जो और-और जलाती नहीं,
निरंतर-निरंतर जगाती है मुझे
मैं जागता हूँ और जानता हूँ
जगतभर का सोना क्यों हुआ महँगा
और कैसे हुआ,कैसे हुआ सस्ता अंधेरा
जबकि उतना भी कठिन नहीं है उजास
और सभी-सभी के लिए सही सलामत
नहीं सिर्फ़ मेरे लिए।

राजकुमार कुम्भज

संपर्क : 331,जवाहरमार्ग, इन्दौर,452002
फ़ोन,0731-2543380.
ईमेल : rajkumarkumbhaj47@gmal.com

मरता नहीं है दूसरा

मरता नहीं है दूसरा
मेरी जगह मरता नहीं है कभी कोई
कुछ ले-देकर भी मरता नहीं है दूसरा
संस्करण तीसरा भी कोई मैं सोचता नहीं
मरता हूँ मेरी जगह मैं ख़ुद ही मरता हूँ
उठाता हूँ ख़तरे फूल और ख़ूशबू बनने के
लिखता हूँ कविताएँ,सोचता हूँ जीवन
क्यारी-क्यारी जगह-जगह बोता हूँ सपने
दु:ख हड्डियों में छुपाकर लिखता हूँ आग
पीता हूँ,पीता हूँ थोड़ी शराब भी पीता हूँ मैं
तमाम-तमाम नैतिकताओं की,नीतियों की
सिरे से उड़ाते हुए धज्जियाँ खुलेआम
धर्म-ग्रंथों पर रखते हुए ताज़ा शव
बाँसुरी जो बजाते हैं,ताशे जो बजाते हैं
उन पर फेंकते हुए कूड़ा-कचरा
जगतभर की रोगग्रस्तता का
क्योंकि वे जानते हैं सचमुच जानते हैं
सोना क्या,होना क्या,खोना क्या?
उन्होंने ही जलाई हैं झुग्गी-झोपड़ी-बस्तियाँ
बेघर किया है उन्होंने ही मुझे और बच्चों को
मेरी जगह मरता हूँ मैं ही मरता हूँ
मरता नहीं है दूसरा।

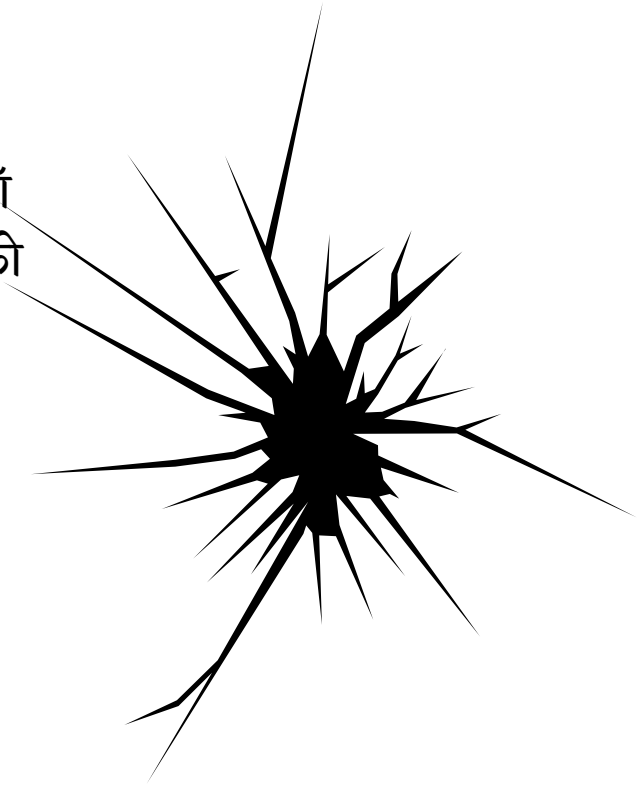

समय चुनता है

समय चुनता है असफलता के लिएं श्रेष्ठ प्राणी
तथा सफलता के लिएं भी
इन दो धुरियों के मध्य ही विचरण करता है
साधारण प्राणी
यह मध्यस्थ जीव कभी ईश्वर की सत्ता को
चुनौती नहीं देता
और न ही दख़ल देता
अंतोगत्वा खाता पीता संतान उत्पन्न कर
मर जाता है
मरता विशिष्ठ एवं श्रेष्ठ प्राणी भी है किन्तु
वह अमर हो जाता है
समय के साथ।।

मुख़्तार अहमद

संपर्क : 56, धीरपुर, निरंकारी कॉलोनी,
नज़दीक अंबेडकर चौपाड़, दिल्ली - 110009
ईमेल : ahmedmukhtar511@gmail.com